इकाई.4 सामवेद – अर्थ, स्वरूप, शिक्षाएँ एवं वर्ण्य विषय

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

साहित्य के रूप में सम्पूर्ण वेद–वाङ्.मय महत्वपूर्ण है, आवश्यकता के अनुसार वेद का साहित्य वढ़ता गया और ब्राह्मण आरण्यक तथा उपनिषद्–साहित्य क्रमशः विकसित हुए। प्राचीन काल से लेकर आजतक वेद–वाङ्.मय सम्पूर्ण विश्व को विविध उपदेश देता रहा है। भारतीय साहित्य में नास्तिकों ने वेद की निन्दा भले ही की हो किन्तु साहित्य और जन–सामान्य का बहुसंख्यक वर्ग उसकी प्रंशसा मुक्तकण्ठ से करता रहा है। आस्तिक दर्शन ईश्वर, ईश्वर की वाणी के रूप में या अपौरूषेय शब्दराशि के रूप में वेदों को देखते रहे है वेद आगम–प्रमाण है, समस्त ज्ञान के स्रोत है, शब्दारि–रूप वेद से संसार के समस्त अर्थ निर्मित हुए है। कौटिल्य के अनुसार ''त्रयी विद्या'' धर्म और अधम्र के बीच भेद का निरूपण करती है। वेदों से लोग अपने जीवन–दर्शन को संचालित कर सकते है।

वेदत्रयी के अन्तर्गत गान का मुख्य केन्द्र अर्थात् सामवेद है। इनमें उन मन्त्रों का संकलन है जो गान के योग्य समक्षे गये मीमांसा सूत्र में सामन् अर्थात् गान का वेद सामवेद है, मानाा गया है। उद्गाता ऋचाओं का शास्त्रीय तथा परम्परागत गान करता है इसीलिए सामवेद का औद्गात्र–वेद भी कहते है। यह वेद मुख्यतः उपासना से सम्बद्ध है, सोमयाग में आवाह्न के योग्य देवताओं की स्तुतियाँ इससे प्राप्त होती हैं। ऋग्वेद की धर्मविषयक सामग्री से पृथक यहाँ कुछ नहीं है। अध्यात्मवादियों की दृष्टि में सोम ब्रह्म या शिव है जिसकी प्राप्ति का साधन उपासना है–सामवेदिक संगीत एवं भक्ति के रूप में यह उपासना होती है।

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से सामवेद के समस्त विषयों पर बड़ी ही सूक्ष्मता से प्रकाश डाला गया है। वेद तो ज्ञान का ब्रह्माण है इसके समस्त ज्ञान सम्भव नहीं परन्तु इनता प्रयास अवश्य किया गया है कि आप सामवेद में वर्णित विषयों का साधारणतः अध्ययन कर अपनी प्रतिभा चक्षु को और अधिक विकसित कर सकें।

4.2 उद्देश्य

- इस इकाई की सहायता से आप सामवेद के अर्थ तथा स्वरूप के विषय में जान सकेगें।
- इस इकाई के माध्यम से सामवेदीय शाखाओं का अध्ययन कर सकेगे।
- सामवेद में वर्णित विषय से परिचित हो सकेगें।
- सामगान की विधि को जान सकेगें।

4.3 सामवेद – अर्थ, स्वरूप, शाखाएं

अथर्ववेद के अनेक स्थलों पर साम की विशिष्ट स्तुति ही नहीं की गई है, प्रत्युत परमात्मभूत 'उच्छिष्ट' (परब्रह्म) तथा 'स्कम्भ' से इसके आविर्भाव का भी उल्लेख किया गया मिलता है। एक ऋषि पूछ रहा है जिस स्कम्भ के साम लोभ हैं वह स्कम्भ कौन सा है? दूसरे मन्त्र में ऋक् साथ साम का भी आविर्भाव 'उच्छिकष्ट' से बतलाया गया है। एक तीसरे मन्त्र में कर्म के साधनभूत ऋक् और साम की स्तुति का विधान किया गया है। इस प्रशंसा के अतिरिक्त विशिष्ट सामों के अभिधान प्राचीन वैदिक साहित्य में उपलब्ध होते हैं, जिससे इन सामों की प्राचीनता निःसंदिग्ध रूप से सिद्ध होती है। ऋग्वेद में वैरूप, वृहत्, रैवत, गायत्र भद्र आदि सामों के नाम मिलते हैं। यजुर्वेद में रथन्तर, वैराज, वैखानस, वामदेव्य, शाक्व, रैवत, अभीवर्त तथा ऐतरेय ब्राह्मण में नौधस, रौरय यौधराजय, अग्निष्टोमीय आदि विशिष्ट सामों के नाम निर्दिष्ट किये गये मिलते हैं। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि साम–गायन अर्वाचीन न होकर अत्यन्त प्राचीनकाल से चला आ रहा है। यहाँ

तक कि ऋग्वेद के समय में भी इन विशिष्ट गायनों का अस्तित्व स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है।

4.3.1 सामवेद का अथ –

साम षब्द का प्रयोग दो अर्थो में किया गया मिलता है। ऋक् मन्त्रों के ऊपर गाये जाने वाले गाान ही वस्तुतः 'साम' षब्द के वाच्य हैं, परन्तु ऋक् मन्त्रों के लिए भी 'सम' षब्द का प्रयोग किया जाता है। पहिले कहा जा चुका है कि साम–संहिता का संकलन उद्गाता नामक ऋत्विज के लिये किया गया है, तथा यह उद्गाता देवता के स्तुतिपरक मन्त्रों को ही आवष्यकतानुसार विविध स्वरों में गाता है। अतः साम का आधार ऋक् मन्त्र ही होता है यह निष्चित ही है– (ऋचि अध्यूढं साम–छा०उ०1/6/1)। ऋक् और साम के इस पारस्परिक गाढ़ सम्बन्ध को सूचित करने के लिये इन दोनों में दाम्पत्य–भाव की भी कल्पना की गई है। पति संतानोत्पादन के लिये पत्नी को आखान करते हुए कह रहा है कि मैं सामरूप पति हूँ, तुम ऋक्रूपा पत्नी हो; मैं आकाष हूँ और तुम पृथ्वी हो। अतः आवो, हम दोनों मिलकर प्रजा का उत्पादन करें। गीतिशु सामाख्या' इस जैमिनीय सूत्र के अनुसार गीति को ही 'साम' संज्ञा प्रदान की गई है। छान्दोग्य उपनिशद् में 'स्वर' साम का स्वरूप बतलाया है। अतः निष्चित है कि 'साम' षब्द से हमें उन गानों को समझना चाहिये जो भिन्न–भिन्न स्वरों में ऋचाओं पर गाये जाते है।

'साम' षब्द की एक बड़ी सुन्दर निरुक्ति बृहदारण्यक उपनिशद् में दी गई है–''सा च अमष्चेति तत्साम्नः सामत्वम्''–वृह०उ०1/3/22। 'सा' षब्द का अर्थ है ऋक् और 'अम' षब्द का अर्थ है गान्धार आदि स्वर। अतः 'सम' षब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ हुआ ऋक् के साथ सम्बद्ध स्वरप्रधान गायन–''तया सह सम्बद्धः अमो नाम स्वरः यत्र वर्तते तत्साम।'' जिन ऋचाओं के ऊपर ये साम गाये जाते हैं उनको वैदिक लोग 'साम–योनि' नाम से पुकराते है। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिये कि जिस साम–संहिता का वर्णन किया जा रहा है वह इन्हीं सामयोनि ऋचाओं का संग्रहमात्र है, अर्थात् साम–संहिता मेकं केवल सामौपयोगी ऋचाओं का ही संकलन है, उन गायनों का नहीं, जो साम के मुख्य वाच्य हैं। ये साम 'गान–संहिता' में संकलित किये गये है।

4.3.2 सामवेद का स्वरूप

सामवेद के दो प्रधान भाग होते है–आर्चिक तथा गान। आर्चिक का शाब्दिक अर्थ है ऋक्–समूह जिसके दो भाग हैं–पूर्वाचिक तथा उत्तरार्चिक। पूर्वाचिक में 6 प्रपाठक या अध्याय है। प्रत्येक प्रपाठक में दो अर्ध या खण्ड है और प्रत्येक में एक 'दशति' और हर एक 'दशति' में ऋचायें है। 'दशति' शब्द से प्रतीत होता है कि इनमें ऋचाओं की संख्या दश होनी चाहिए, परन्तु किसी खण्ड में यह दस से कम है और कहीं दस से अधिक। दशतियों में मन्त्रों का संकलन छन्द तथा देवता की एकता पर निर्भर है। ऋग्वेद के भिन्न–भिनन मण्डलों के भिन्न–भिन्न ऋषियों के द्वारा दृष्ट भी ऋचायें एक देवता–वाचक होने से यहाँ एकत्र संकलित की गई है। प्रथम प्रपाठक को आग्नेय काण्ड (या पर्व) कहते हैं, क्योंकि इसमें अग्नि–विषयक ऋग् मन्त्रों का समवाय उपस्थित किया गया है। द्वितीय से लेकर चतुर्थ अध्याय तक इन्द्र की स्तुति होने से 'ऐन्द्र–पर्व' कहलाता है। पंच्चम अध्याय को 'पवमान पर्व' कहते हैं, क्योंकि यहाँ सोम–विषयक ऋचायें संगृहीत हैं, जो पूरी की पूरी ऋग्वेद के नवम् (पवमान) मण्डल से उद्धृत की गई है। षष्ठ प्रगाठक को 'आरण्यक पर्व' की संज्ञा दी गई है; क्योंकि देवताओं तथा छन्दों की विभिन्नता होने पर भी इनमें गान–विषयक एकता विद्यमान है। प्रथम से लेकर पंच्चमाध्याय तक की ऋचायें तो 'ग्राम–गान' कही जाती है, परन्तु षष्ठ अध्याय की ऋचायें अरण्य में ही गाई जाती है।

उत्तरार्चिक में 9 प्रपाठक है। पहले पाँच प्रपाठकों में दो–भाग है, जो 'प्रपाठ–कार्घ

कहे जाते हैं, परन्तु अन्तिम चार प्रपाठकों में तीन–तीन अर्ध है। राणायनीय शाक्षा के अनुसार है। कौथुम शाक्षा में इन अर्ध को अध्याय तथा दशतियों को खण्ड कहने की चाल है। उत्तरार्चिक के समग्र मन्त्रों की संख्या बारह सौ पच्चीस (1225) हैं अतः दोनों आर्चिकों की सम्मिलित मन्त्र–संख्या अठारह सौ पचहत्तर (1875) है। ऊपर कहा गया है कि साम ऋचायें ऋग्वेद से संकलित की गई है, परन्तु कुछ ऋचायें नितान्त भिन्न हैं, अर्थात् उपलब्ध शाकल्य–संहिता में ये ऋचायें बिलकुल नहीं मिलती। यह भी ध्यान देने की बात है कि पूर्वाचिक के 267 मन्त्र (लगभग तृतीयांश से कुछ ऊपर ऋचायें) उत्तरार्चिक में पुनरुल्लिखित किये गये हैं। अतः ऋग्वेद की वस्तुतः पन्द्रह सौ चार (1504) ऋचायें ही सामवेद में उद्धृत हैं। सामान्यरूपेण 75 मन्त्र अधिक माने जाते हैं, परन्तु वस्तुतः संख्या इससे अधिक है। 99 ऋचायें एकदम नवीन हैं, इनका संकलन सम्भवतः ऋग्वेद की अन्य शाखाओं की संहिताओं से किया गया होगा। यह आधुनिक विद्वानों की मान्यता है।

ऋग्वेद की ऋचायें 1504 + पुनरुक्त 267 = 1771
नवीन ʼʼ 99 + ʼʼ 5 = 1771
सामसंहिता की सम्पूर्ण ऋचायें = 1675 (अठारह सौ पचहत्तर)

ऋक् – साम के सम्बन्ध की मीमांसा

ऋग्वेद तथा सामवेद के परस्पर सम्बन्ध की मीमांसा यहाँ अपेक्षित है। वैदिक विद्वानों की यह धारणा है कि सामवेद उपलब्ध ऋचायें ऋग्वेद से ही गान के निमित्त गृहीत की गई है, वे कोई स्वतन्त्र ऋचायें नहीं है। यह बद्धमूल धारणा नितान्त भ्रान्त है। इसके अनेक कारण है–

(क) सामवेद की ऋचाओं में ऋग्वेद की ऋचाओं से अधिकतर आंशिक साम्य है। ऋग्वेद का 'अग्नेयुक्ष्वा हि ये तवाऽश्र्वासो देव साधवः। अरं बहन्ति मन्यवे (6/16/43) सामवेद में 'अग्ने युक्ष्वा हि ये तवाश्र्वासों देव साधवः। हरं वहन्त्याशवः' रूप में पठित है। ऋग्वेद का मन्त्रांश 'अपो महि व्ययति चक्षसे तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी' (7/81/1) सामवेद में 'अपो मही वृणुते चक्षुषा तमो ज्योतिष् कृणोति सूनरी' रूप धारण करता है। इस आंशिक साम्य के तथा मन्त्र में पादव्यत्यय के अनेक उदाहरण सामवेद में मिलते है। यदि ये ऋचायें ऋग्वेद से ही ली गई होती, तो वे उसी रूप में और उसी क्रम में गृहीत होतीं, परन्तु वस्तुस्थिति सभी नहीं है।

(ख) यदि ये ऋचायें गायन के लिए ही सामवेद में संगृहीत है, तो कवेल उतने ही मन्त्रों का ऋग्वेद से सकलन करना चाहिए था, जितने मन्त्र गाान या साम के लिए अपेक्षित होते। इसके विपरीत हम देखते हैं कि सामसंहिता में लगभग 450 ऐसे मन्त्र है, जिन पर गान नहीं है। ऐसे गानानपेक्षित मन्त्रों का सकलन सामसंहिता में क्यों किया गया है?

(ग) सामसंहिता के मन्त्र ऋग्वेद से ही लिए गये होते, तो उनका रूप ही नहीं, प्रत्युत उनका स्वरनिर्देश भी, तद्वत् होता। ऋग्वेद के मन्त्रों में उदात अनुदात्त तथा स्वरित स्वर पाये जाते हैं, जब सामवेद निर्देश 1, 2, तथा 3 अंकों के द्वारा किया गया है जो 'नारदीशिक्षा' के अनुसार क्रमशः मध्यम, गान्धार और ऋषभ स्वर हैं। ये स्वर अंगुष्ठ, तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों के मध्यम पर्व पर अंगुष्ठ का स्पर्श करते हुए दिखलायें जाते हैं। साममन्त्रों का उच्चारण ऋक्मन्त्रों के उच्चारण से नितान्त भिन्न होता है।

(घ) यदि सामवेद ऋग्वेद के बाद की रचना होती, (जैसा आधुनिक विद्वान् मानते है), तो ऋग्वेद के अनेक स्थलों पर साम का उल्लेख कैसे मिलता? अंगिरसा सामभिः स्तूयमानाः (ऋ० 1/107/2), उद्गातेव शकुने साम गायति (2/43/2), इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते वृहत् (8/98/1)–आदि मन्त्रों में सामान्य साम का भी उल्लेख नहीं है, प्रत्युत 'बृहत्साम' जैसे विशिष्ट साम का भी उल्लेख मिलता है। ऐतरेय ब्राह्मण (2/23) का तो

स्पष्ट कथन है कि सृष्टि के आरम्भ में ऋक् और साम दोनों का अस्तित्व था (ऋक् च वा इदमग्रे साम चास्ताम्)। इतना ही नहीं, यज्ञ की सम्पन्नता के लिए होता, अध्वर्यु तथा ब्रह्म नामक ऋत्विजों के साथ 'उद्गाता' की भी सत्ता सर्वथा मान्य है। इन चारों ऋत्विजों के उपस्थित रहने पर ही यज्ञ की समाप्ति सिद्ध होती है और 'उद्गाता' का कार्य साम का गायन ही तो है? तब साम की अर्वाचीनता क्यों नहीं विश्वसनीय है। मनु ने स्पष्ट ही लिखा है कि परमेश्वर ने यज्ञसिद्धि के लिए अग्नि, वायु तथा सूर्य से क्रमशः सनातन ऋक् यजुः तथा सामरूप वेदों का दोहन किया (मनुस्मृति 1/23) 'त्रयं ब्रह्म सनातनम्' में वेदों के लिए प्रयुक्त 'सनातन' विशेषण वेदों की नित्यता तथा अनादिता दिखला रहा है। 'दोहन' से भी इसी तथ्य की पुष्टि होती है।

(ड.) साम का नामकरण विशिष्ट ऋषियों के नाम किया गया मिलता है, तो क्या वे ऋषि इन सामों के कर्ता नहीं है? इसका उत्तर है कि जिस साम से सर्वप्रथम जिस ऋक् को इष्ट प्राप्ति हुई, उस साम का वह ऋषि कहलाता है। ताण्डय ब्राह्मण में इस तथ्य के द्योतक स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध है। ''वृषा शोणों 'अभिकनिक्रदत्' (ऋ०9/97/13) ऋचा पर साम का नाम 'वसिष्ठ' होने का यही कारण है कि बीडु के पुत्र वसिष्ठ ने इस साम से स्तुति करके अनायास स्वर्ग प्राप्त कर लिया (वसिष्ठं भवति, वसिष्टों वा एतेन वैडवः स्तुत्वाऽज्जसा स्वर्ग लोकमपश्यत्–ताण्डय ब्रा० 11/8/13) 'तं वो दस्ममृतीषहं (9/88/1) मन्त्र पर 'नौधस साम' के नामकरण का ऐसा ही कारण अन्यत्र कथित है (ताण्डŸा 7/10/10)। फलतः इष्टसिद्धिनिमित्तक होने से ही सामों का ऋषिपरक नाम है, उनकी रचना के हेतु नहीं।

इन प्रमाणों पर ध्यान देने से सिद्ध होता है कि सामसंहिता के मन्त्र ऋग्वेद से उधार लिये गये नहीं हैं, प्रत्युत उससे स्वतन्त्र हैं और वे उतने ही प्राचीन हैं जितने ऋग्वेद के मन्त्र। अतः सामसंहिता की स्वतन्त्र सत्ता है, वह ऋक् संहिता पर आधृत नहीं है।

4.3.3 सामवेद की शाखायें

भागवत, विष्णुपुराण तथा वायुपुराण के अनुसार वेदव्यासजी ने अपने शिष्य जैमिनि को साम की शिक्षा दी। कवि जैमिनि ही साम के आद्य आचार्य के रूप में सर्वत्र प्रतिष्ठित है। जैमिनि ने अपने पुत्र सुमन्तु को, सुमन्तु ने अपने पुत्र सुन्वान को और सुन्वान ने स्वकीय सूनु सुकर्मा को सामवेद की संहिता का अध्ययन कराया। इस संहिता के विपुल विस्तार का श्रेय इन्हीं सामवेदाचार्य सुकर्मा को प्राप्त है इनके दो पट्ट–शिष्य हुए–(1) हरिण्यनाभ कौशल्य तथा (2) पौष्यज्जि, जिनसे सामगायन की द्विविध धारा–प्राच्य तथा उदीच्य–का आविर्भाव सम्पन्न हुआ। प्रश्न उपनिषद् (6/1) में हिरण्यनाभ कोशल–देशीय राजपुत्र के रूप में निर्दिष्ट किये गये है। भागवत (12/6/78) ने सामगों की दो परम्पराओं का उल्लेख किया है–प्राच्यसामगाः तथा उदीच्यसामगाः। ये दोनों भौगोलिक भिन्नता के कारण नाम निर्देश हैं। इन भेदों का मूल सुकर्मा नामक सामाचार्य के शिष्यों के उद्योगों का फल है। भागवत ने सुकर्मा के दो शिक्ष्यों का उल्लेख किया है–(1) हिरण्यनाथ (या हिरण्यनाभी) कौशल्य, (2) पौष्यज्जि जो अवन्ति देश के निवासी होने से 'आवन्त्य' कहे गये हैं। इनमें से अन्तिम आचार्य के शिष्य 'उदीच्य सामग' कहलाते थे। हिरण्यनाभ कौशल्य की परम्परा वाले सामग 'प्राच्य सामगाः' के नाम से विख्यात हुए। प्रश्नोपनिषद् (6/1) के अनुसार हिरण्यनाभ कोशल देश के राजपुत्र थे। फलतः पूर्वी प्रान्त के निवासी होने के कारणउनके शिष्यों को 'प्राच्यसामगाः' नाम से विख्याति उचित ही है। हिरण्यनाभ का शिष्य पौरवंशीय सन्नतिमान् राजा का पुत्र कृत था, जिसने सामसंहिता का चौबीस प्रकार से अपने शिष्यों द्वारा प्रवर्तन किया। इसका वर्णन मत्स्यपुराण (49 अ०, 75–76

श्लो०) हरिवंश (20/41–44), विष्णु (4/19–50); वायु (41/44), ब्रह्मण्ड पुराण (35/49–50), तथा भागवत (12/6/80) में समान शब्दों में किया गया हैं। वायु तथा ब्रह्मण्ड में कृत के चौबीस शिष्यों के नाम भी दिये गये हैं। कृत के अनुयायी होने के कारण ये साम आचार्य 'कार्त' नाम से प्रख्यात थे–(मस्त्य पुराण 49/76)–

चतुर्विंशतिधा येन प्रोक्ता वै सामसंहिताः।
स्मृतास्ते प्राच्यसामानः कर्ता नामेह सामगाः।।

इनके लौगक्षि, मा"लि, कुल्य, कुसीद तथा कुक्षि नामक पाँच शिष्यों के नाम श्रीमद्मभागवत (12/6/69) में दिये गये हैं, जिन्होंने सौ–सौ सामसंहिताओं का अध्यापन प्रचलित कराया। वायु तथा ब्राह्मण्ड के अनुसार इन शिष्यों के नाम तथा संख्या में पर्याप्त भिन्नता दीख पड़ती है। इनका कहना है कि पोषिप्जि के चार शिष्य थे–इन पुराणों में, विशेषरूप से दिया गया है। नाम धाम में जो कुछ भी भिन्नता हो, इतना तो निश्चित सा प्रतीत होता है कि सामवेद के सहस्र शाखाओं से मण्डित होने में सुकर्मा के ही दोनों शिष्य–हिरण्यनाभ तथा पौष्पिज्जि–प्रधानतया कारण थे। पुराणोपलब्ध सामप्रचार का यही संक्षिपत वर्णन है।

सामवेद की कितनी शाक्षायें थी? पुराणों के अनुसार पूरी एक हजार, जिसकी पुष्टि पतज्जलि के 'सहस्रवर्त्मा सामवेदः' वाक्य से भली–भॉति होती है। सामवेद गानप्रधान है। अतः संगीत की विपुलता तथा सूक्ष्मता को ध्यान में रखकर विचारने से यह संख्या कल्पित सी नहीं प्रतीत होती, परन्तु पुराणों में कहीं भी इन सम्पूर्ण शाखाओं का नामोल्लेख उपलब्ध नहीं होता। इसलिये अनेक आलोचकों की दृष्टि में 'चर्त्म' शब्द शाखावाची न होकर केवल सामगायनों की विभिन्न पद्धतियों को सूचित करता है। जो कुछ भी हो, साम की विपुल बहुसंख्यक शाखायें किसी समय अवश्य थीं, परन्तु दैवदुर्ग से उनमें से अधिकांश का लोप इस ढंग से हो गया कि उनके नाम भी विस्मृति के गर्त में विलीन हो गये।

आजकल प्रपच्चहृदय, दिव्यावदान, चरणव्यूह तथा जैमिनि गृह्यसूत्र (1/14) के पर्यालोचन से 13 शाखाओं के नाम मिलते हैं। सामतर्पण के अवसर पर इन आचार्यों के नाम तर्पण का विधान मिलता है– 'राणायन –सातयमुगि॰–व्यास –भागुरि –औलुण्डि –गौल्मुलवि–भानु–मानौपमन्यव–काराटि–मशक–गार्ग्य–वार्षगण्यकौथुमि–शालिहोत्र–जैमिनि –त्रयोदशैते ये स्रामगाचार्याः स्वस्ति कुर्वन्तु तर्पिताः'। इन तेरह आचार्यों में से आजकल केवल तीन ही आचार्यों की शाखायें मिलती हैं–(1) कौथुमीय (2)राणायनीय तथा (3) जैमिनीय। एक बात ध्यान देने योग्य है कि पुराणों में उदीच्य तथा प्राच्य सामगों के वर्णन होने पर भी आजकल न उत्तर भारत में साम का प्रचार है, न पूर्वी भारत में, प्रत्युत दक्षिण तथा पश्चिम भारत में आज भी इन शाखाओं का यत्किन्चित प्रकार है। संख्या तथा प्रचार की दृष्टि से कौथुम शाखा विशेष महत्वपूर्ण हैं इसका प्रचलन गुजरात क ब्राह्मणों में, विशेषतः नागर ब्राह्मणों में है। राणायनीय शाखा महाराष्ट्र में तथा जैमिनीय कर्नाटक में तथा सुदूर दक्षिण के तिन्नेवेली और तज्जौर जिले में मिलती जरूर है, परन्तु इनके अनुयायियों की संख्या कौथुमों की अपेक्षा अल्पतर है।

(1) कौथुम शाखा –

इसकी संहिता सर्वाधिक लोकप्रिय है। इसी का विस्तृत वर्णन पहले किया जा चुका है। इसी की ताण्ड्य नामक शाक्षा भी मिलती है, जिसका किसी समय विशेष प्रभाव तथा प्रसार था। शंकराचार्य ने वेदान्त–भाष्य के अनेक स्थलों पर इसका नाम निर्देशन किया है, जो इसके गौरव तथा महत्त्व का सूचक है। पच्चीस काण्डात्मक विपुलकाय ताण्ड्य –ब्राह्मण इसी शाक्षा का हैं सुप्रसिद्ध छान्दोग्य उपनिषद् भी इसी शाखा से सम्बन्ध रखती है। इसका निर्देश शंकराचार्य ने भाष्य में स्पष्टतः किया है।

(2) राणायनीय शाखा –

इसकी संहिता कौथुमों से कथमपि भिन्न नहीं है। दोनों मन्त्र–गणना की दृष्टि एक ही है। केवल उच्चारण में कहीं–कहीं पार्थक्य उपलब्ध होता है। कौथुमीय लोग जहाँ 'हाउ' तथा 'राइ' कहते हैं, वहाँ राणयनीय गण 'हाबु' तथा 'रायी' उच्चारण करते हैं। राणायनीयों की एक अवान्तर शाखा सात्यमुग्रि है जिसकी एक उच्चारणविशेषता भाषा–विज्ञान की दृष्टि से नितान्त आलोचनीय है। आपिशली शिक्षा तथा महाभाष्य ने स्पष्टतः निर्देश किया है कि सत्यमुग्रि लोग एकार तथा ओंकार का स्वर उच्चारण किया करते थे। आधुनिक भाषाओं के जानकारी को याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है कि प्राकृत भाषा तथा आधुनिक प्रान्तीय अनेक भाषाओं में 'ए' तथा 'ओ' का उच्चारण ह्रस्व भी किया जाता है। इस विशेषता की इतनी प्राचीन और लम्बी परम्परा है; भाषाविदों के लिए यह ध्यान देने की वस्तु है।

(3) जैमिनीय शाखा–

हर्ष का विषय है कि इस मुख्य शाखा के समग्र अंश संहिता, ब्राह्मण श्रोत तथा गृह्रसूत्र–आजकल उपलब्ध हो गये है। जैमिनीय संहिता नागराक्षर में भी लाहौर से प्रकाशित हुई हैं इसके मन्त्रों की संख्या 687 है, अर्थात् कौथुम शाक्षा से एक सौ बयासी (182) मन्त्र कम हैं। दोनों में पाठभेद भी नाना प्रकार के हैं। उत्तरार्चिक में ऐसे अनेक नवीन मन्त्र है जो कौथुमीय संहिता में उपलबध नहीं होते, परन्तु जैमिनीयों के सामगान कौथुमों से लगभग एक हजार अधिक है। कौथुमगान केवल 2722 हैं, परन्तु इनके सथान पर जैमिनीय गान छत्तीस सौ इक्यासी (3681) है। इन गानों के प्रकाशन होने पर दोनों की तुलनात्मक आलोचना से भाषाशास्त्र के अनेक सिद्धान्तों का परिचय मिलेगा। तवलकर शाखा इसकी अवान्तर शाखा है, जिससे लघुकाय, परन्तु महत्वशाली, केनोपनिषद् सम्बद्ध है। ये तवलकार जैमिनि के शिष्य बतलायें जाते हैं।

ब्राह्मण तथा पुराण के अध्ययन से पता चलता है कि साममन्त्रों, उनके पदों तथा सामगानों की संख्या अद्यावधि उपलब्ध अंशों से कहीं बहुत अधिक थी। शतपथ में साममन्त्रों के पदों की गणना चार सहस्र बृहती बतलाई गई है, अर्थात् 4 हजार × 36 = 1,44,000, अर्थात् साममन्त्रों के पद एक लाख 44 हजार थे। पूरे साभों की संख्या थी आठ हजार तथा गायनों की संख्या थी चौदह हजार आठ सौ बीस 1480 (चरण ब्यूह) अनेक स्थलों पर बार–बार उल्लेख से यह संख्या अप्रामाणिक नहीं प्रतीत होती। इस गणना में अन्य शाखाओं के सामों की संख्या अवश्य ही सम्मिलित की गई है।

कौथुम शाखीय सामगान दो भागों में है–ग्रामगान तथा आरण्यगान। यह औंधनगर से श्री ए० नारायण स्वामिदीक्षित के द्वारा सम्पादित होकर 1999 विक्रम सं० में प्रकाशित हुआ है।

जैमिनीय साम–गान का प्रथम प्रकाशन संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से 2033 वि०सं० में हुआ है। यह सामगान पूर्वाचिक से सम्बद्ध मन्त्रों पर ही है। इसके तीन भाग है–आग्नेय, ऐन्द्र तथा पावमान। इनमें आदिम तथा अन्तिम पर्व का विशेष विभाग नहीं है, परन्तु ऐन्द्रपर्व के चार है। पूरे ग्रन्थ में गान संख्या 1224 है (एक सहस्र दो सौ चौबीस)। कौथुमीय सामसंहिता से जैमिनीय साम संहिता के पाठ में सर्वथा भेद नहीं है, परन्तु गान प्रकार सर्वथा भिन्न हैं अभी तक केवल प्रथम भाग ही प्रकाशित है। द्वितीय खण्ड हस्तलेख में ही है।

4.4 सामवेद– वर्ण्य विषय

'साम' रूढ़ शब्द है, जिसका अर्थ गान अथवा गीति है, जैसाप कि जैमिनि ने 'गीतिषु सामाख्या' (जै०सू० 2/1/36) में बतलाया है। गान–विशेष का रथन्तर, बृहत् आदि नामकरण है। 'साम' शब्द सामान्य गान वाची है और रथन्तर, वृहत् आदि शब्द गानविशेष के वाचक है। रथन्तर, बृहत् आदि नामकरण का प्रयोजक अध्येतृ–प्रसिद्ध ही है। गायत्रादि सभी छन्दों में सामगान है। उदाहरणार्थ–'अग्न आयाहि वीतते' (छन्द आर्थिक 1/1/1) इस गायत्र्याछन्दस्क ऋचा पर वेदगान 1/1/1 में साम है। 'पुरुत्वादाशिव' (छं०आ० 2/1/1) इस 'यज्ञयज्ञा वो' (छं०आ० 1/1/35) इस बृहती छन्द की ऋचा पर वेयगान 1/2/27 में साम है। 'स्वादोरित्थ विषूवतो' (छं०आ० 5/1/19) इस पङ्. क्तिछन्दस्क ऋचा पर वेयगान 11/1/6 में, 'आ जुहोता हविषा' (छं० आ० 1/2/9) इस त्रिष्टुप् छन्द की ऋचा पर वेयगान 2/1/34 में, चित्र इच्छिषो० (छं०आ० 1/2/10) इस जगती छन्द की ऋचा पर वेयगान 2/1/35 में साम है। इसी प्रकार अजिजगती, शक्वरी, अतिशक्वरी, अष्टि तथा अत्यष्टि नामक अतिछन्दक ऋचाओं पर भी साम है।

समवेदीय शाखाओं का संहिता भाग में पार्थक्य कौथुमी एवं जैमिनीय शाखा के संहिता ग्रन्थों को देखनें से प्रतीत होता है। इसी प्रकार गान–भाग में भी पार्थक्य है, या नहीं ? यह अनुभवराहित्य के कारण निश्चित रूप से कहना कठिन है। सम्भव है कि संहिता भाग में पार्थक्य की तरह गान–भाग में भी कुछ वैशिष्टय हो। कौथुमी शाखा से भिन्न जैमिनीय शाखा के कुछ मन्त्र ऋग्वेद संहिता में मिलते हैं। सामों का परस्पर वैशिष्टय विकार, विश्लेषण, विकर्षण, अभ्यास, विराम तथा स्तोभ के कारण होता है।

यज्ञों में औद्गातृगण के चारों ऋत्विजों के कर्मकलापों में कहीं–कहीं भिन्नता और कहीं–कहीं सहकारिता है। इसका विधान श्रौतसूत्रों द्वारा अवगत हो सकता है। सामों का यज्ञों में कहीं–कहीं केवल प्रस्तोता के लिए, तो कहीं उद्गाता के लिए गान करने का विधान है और कहीं–कहीं प्रस्ताव, उद्गीय प्रतिहार, उपद्रव तथा निधन रूप से गान के पाँच भाग करके विभिनन अंशों के विभिन्न ऋत्विजों द्वारा उच्चारण करने की विधि है।

पूर्वार्चिक का उत्तरार्चिक से यही सम्बन्ध है कि उत्तरार्चिक में जो प्रगाथ किंवा तीन–बार ऋचाओं के सूक्त है, उनमें अधिकतर पहली ऋचाएँ पूर्वाचिक में पठित हैं। पूर्वाचिंक में नानाविध सामों की योनिभूत ऋचाएँ पठित है और उत्तरार्चिक में प्रगाथ तथा तृचादि सूक्त पठित हैं। एक प्रगाथात्मक या तृचाद्यात्मक सूक्त में पूर्वार्चिकान्तर्गत योनिभूत ऋक् पहली ही और अन्य दो उत्तर ऋचाएँ हैं। पूर्वाचिक तथा उत्तरार्चिक के संबन्ध को लेकर पाश्चात्य विद्वानों ने पर्याप्तरूपेण मीमांसा की हैं डाक्टर कैलेण्ड तो कभी उत्तरार्चिक को ही दोनों में अपेक्षाकृत प्राचीनतर मानते थे, परन्तु अब उन्होंने अपने ही पूर्व मत को भ्रान्त मानकर छोड़ दिया है। पूर्वाचिक के प्राचीनतर होने का यही कारण नहीं है कि यह ऋचाओं का संग्रह 'पूर्व' शब्द के द्वारा सूचित होने से काल क्रम में प्राचीन है, परन्तु इसके लिए अन्य कारण भी हैं। सामविधान ब्राह्मण में उत्तरार्चिक के मन्त्रों का उद्धरण कहीं भी नहीं है। अथर्व–परिशिष्ट (46/3/6) के अनुसार सामवेद की अन्तिम ऋचा वही है जो पूर्वार्चिक की उपान्त्य ऋचा है (सा०सं० 584)। इन्हीं प्रमाणों के आधार पर डॉ० ओल्डनबर्ग ने जो पूर्वाचिक की अपेक्षाकृत पूर्वतर माना है वह उचित ही है। डॉ० कैलेण्ड का कहना है कि उद्गातागण यज्ञ में प्रयुज्मान ऋचाओं को ऋग्वेद से ही साक्षात् रूप से प्रथमतः ग्रहण किया करते थे। अनन्तर ये मन्त्र कालान्तर में उत्तरार्चिक में संगृहीत कर लिये गये। अतः उत्तरार्चिक निश्चितरूपेण यज्ञोपयोगी ऋचाओं का अवान्तरकालीन उपयोगी संग्रह हैं इतना ही नहीं; इनके ऊपर आश्रित ऊह–गान तथा ऊह्य–गान को भी वे सामवेदीय ग्रन्थों में सबसे पीछे विरचित मानते है। वे इन गानग्रन्थों को ताण्ड्य–ब्राह्मण से पीछे, लाट्यायन श्रौतसूत्र से पीछे, आर्षेय कल्प तथा पुष्पसूत्र से भी पीछे मानने का इसलिए आग्रह करते

हैं कि द्राह्मायण श्रौतसूत्र के टीकाकार घन्वी ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ऊहगान तो सूत्रकार के पीछे निर्मित हुआ है। निष्कर्ष यह है कि आधुनिक अनुशीलन से भी पूर्वाचिक उत्तरार्चिक की अपेक्षा प्राचीनतर सिद्ध होता है।

गानों के प्रकार –

गान चार प्रकार के हैं, जिनके निर्देशक भिन्न–भिनन ग्रन्थ है। इन चारों के नाम है–(1) वेयगान (या ग्रामे गेय गान); (2) आरण्य–गान, (3) ऊहगान तथा (4) ऊह्यगान। प्रथम दो गान (वेय तथा आरण्य) योनिगान हैं, तथा ऊह और ऊह्म विकृति–गान कहे जाते है। ऊह की प्रकृति वेय–गान है, तथा ऊह्य की प्रकृति (या योनि) आरण्य–गान है। इसका तात्पर्य यह है कि ये वेयगान में प्रयुक्त स्वररागदि आ आश्रय लेकर ही ऊहगान का निर्माण होता है और आरण्य गान के स्वररागादि के आधार पर ही ऊह्यगान की रचना की गई है। इन चारों गानों के स्वरूप का पार्थक्वय उनके नामकरण से भली भाँति चलता है। वैयगान का दूसरा नाम है–ग्रामे गये गान, अर्थात् वह ग्राम में, समाज में गाने योग्य होता है, परन्तु 'आरण्य–गान' के अन्तर्गत साम अरण्य में ही गाने होते हैं। सामवेदियों की मान्यता है कि आरण्य–गान के स्तोभ इतने विलक्षा तथा विचित्र हैं कि ग्राम से उनसे अनर्थ होने की सम्भावना रहती है। वे इतने पवित्र होते हैं कि अरण्य के पूत वातावरण में ही उनका उचित गायन किया जा सकता है और उचित प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। 'ऊह' का अर्थ है ऊहन, किसी अवसरविशेष पर मन्त्रों का सामयिक परिवर्तन। इसी व्याख्या के अनुसार 'ऊह–गान' सोमयाग के अवसर पर प्रयोजनीय सामों का नाम है। 'ऊह्य–गान' का पूरा नाम उह्य (रहस्य) गान है तथा रहस्यात्मक होने के कारण ही ये 'आरण्य–गान' के विकृति–गान माने जाते हैं। आरण्य गान के समान ये गान भी रहस्यात्मक होते हैं और इसीलिए सर्व–साधारण के सामने समाज के भीतर इनका गायन निषिद्ध माना जाता है।

मन्त्रों पर साम निश्चित ही है। किसी ऋचा पर कौन से तथा कितने साम होंगे? इसका निश्चित वैदिकों की परम्परा से होता आया है। साम अनियत नहीं, किन्तु नियत हैं। नियमन का बीज वैदिक प्रसिद्ध ही मानना उचित है। सामवेद में पठित समग्र ऋचाओं पर साम हों, ऐसा कोई नियम नहीं है। कतिपय ऋचाओं पर साम का सर्वथा अभाव है। ऋचायें उत्तरार्चिक में ही पाई जाती है। उदाहरणार्थ 'यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव' (सामवेद सं० 1866), भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवाः (सामवेद सं० 1874), 'आशुः शिशानों वृषभों न भीमः (साम०सं०1849) ऋचाओं पर कोई भी गान गानग्रन्थों में नहीं दिये गये हैं। ऋचा–विशेष पर सामों की संख्या भी वैदिक प्रसिद्धि से ही नियत है। ऐसी अनेक ऋचायें मिलती है जिनके ऊपर चारों प्रकार के गान होते हैं और वे भी अनेक प्रकार के मिलते हैं। उदाहरणार्थ 'अया रुचा हरिण्या' (सा०सं०463) तथा 'अयं पूषा रयिर्मगाः' (सा०सं० 546 तथा 818) के ऊपर पूर्वोक्त चारों प्रकार के गान मिलते है। द्वितीय ऋचा पर तो समग्र सामों की संख्या 25 है। इतना ही नहीं, एक ऋचा के ऊपर प्रयुक्त सामों की सबसे बड़ी संख्या 61 है, जो 'पुनानः सोम धारया' (ऋ०9/107/4; सा०सं० 511) के ऊपर गाये जाते है। इससे उतर कर सामों की दूसरी बड़ी संख्या 59 है, जो 'पुरोजिती वो अंधस' (सा०सं० 545) ऋचा के ऊपर अधिष्ठित होते हैं। तीसरी संख्या 48 सामों की है; जो धारया पावकया' (सा०सं० 698) के ऊपर गाये जाते हैं। 25 सामों को रखनेवाली ऋचायें तो संख्या में अनेक है। इन विशिष्ट सामों की स्थिति तथा संख्या का नियम प्राचीन वैदिक परम्परा के ही ऊपर आश्रित है।

स्तोभ तथा विष्टुति –

शस्त्र तथा स्तोत्र में अन्तर होता है। शस्त्र का लक्षण है 'अप्रगीतमन्त्रसाध्या स्तुतिः

शस्त्रम्'–अर्थात बिना गाये गए मन्त्र के द्वारा सम्पादित स्तुति। 'शस्त्र' ऋग्वेद में होता है और स्तोत्र सामवेद में। स्तोत्र का स्पष्ट अर्थ है–'प्रगीत–मन्त्र–साध्या स्तुतिः स्तोत्रम्।' स्तोभ भी स्तुति का ही एक प्रकारान्तर है। स्तोभों का प्रयोग भी यज्ञ यागों में होता है। इनका विशेष वर्णन ताण्ड्यब्राह्मण में किया है। स्तोम की संख्या नौ है–(1) त्रिवृत्, (2) पच्चदश, (3) सप्तदश, (4)एकविंश, (5) त्रिणव, (6) त्रयस्त्रिंश, (7) चतुर्विंश, (8) चतुश्वत्वारिंश तथा (9) अष्टचत्वारिंश। ये स्तोभ प्रायः तृच पर हुआ करते हैं। इन तृचों को तीन पर्याय में गाने का नियम है और प्रत्येक पर्याय में तृचों पर साम के गान की आवृत्ति का नियम है। इस प्रकार तृतीय पर्याय में स्तोभ का स्वरूप निष्पन्न हो जाता है। इस आवृत्ति–जन्य गान के प्रकार की संज्ञा 'विष्टुतित' (= विशेष स्तुति) हैं इन नवों स्तोभों की समग्र विष्टुतियाँ संख्या में 28 की है जिनका विशेष वर्णन ताण्ड्य –ब्राह्मण के द्वितीय तथा तृतीय अध्याय में दिया गया है।

उदाहरणार्थ 'पच्चदशस्तोभ' को लीजिए। इसकी तीन विष्टुतियाँ होती है। प्रत्येक विष्टुति में तृच में प्रत्येक ऋचा का गायन तीन पर्याय में सिद्ध होता है। प्रतिपर्याय में 5 बार गायन होता है, जिससे मिलाकर पूरा गायन 15 बार सम्पन्न होता है। प्रथम पर्याय में पहली ऋचा को तीन बार तथा दूसरी और तीसरी को एक–एक बार गाना पड़ता है। द्वितीय पर्याय में प्रथम तथा तृतीय ऋचा को एक–एक बार और द्वितीय ऋचा को तीन बार गाना चाहिए। तृतीय पर्याय में प्रथम तथा द्वितीय ऋचा एक–एक बार तथा तृतीय ऋचा को तीन बार गाना होता है। इस प्रकार पूरे पर्यायों की सामाप्ति पर पन्द्रह बार गायन होने से इसे 'पच्चदश स्तोभ' का अन्वर्थक नाम दिया गया है। इसी प्रकार अन्य स्तोभों की भी दशा है।

साम के विभाग

साम–गायन की पद्धति बहुत ही कठिन है, उसकी ठीक–ठीक जानकारी के लिये सूक्ष्म अध्ययन की आवश्यकता हैं साधारण ज्ञान के लिये यह जानना पर्याप्त है कि सामगान के पाँच भाग होते हैं–

(1) प्रस्ताव–यह मन्त्र का आरम्भिक भाग है जो 'हूँ' से प्रारम्भ है। इसे प्रस्तोता नामक ऋत्विज् गाता है। (2) उद्गीथ–इसे साम का प्रधान ऋत्विज् उद्गाता गता है। इसके आरम्भ में ऊँ लगाया जाता है। (3) प्रतीहार–इसका अर्थ है दो को जोड़ने वाला। इसे प्रतिहर्ता नामक ऋत्विज् गाता है। इसी के कभी–कभी दो टुकड़े कर दिये जाते है। (4) उपद्रव–जिसे उद्गाता गाता है तथा (5) निधन–जिसमें मन्त्र के दो पद्यांश या ऊरहता है। इनका गायन तीनों ऋत्विज्–प्रस्तोता, उद्गाता प्रतिहर्ता–एक साथ मिलकर करते हैं। उदाहरण के लिये सामवेद का प्रथम मन्त्र लिजिये–

अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि।।

इसके ऊपर जिस साम का गायन किया जायेगा उसके पाँचों अ" इस प्रकार है–

(1) हूँ ओग्नाइ (प्रस्ताव)।
(2) ओम् आयाहि बीतये गृणानो हव्यदातये (उद्गीथ)।
(3) नि होता सत्सि बर्हिषि ओम् (प्रतिहार)।
इसी प्रतिहार के दो भेद होगें, जो दो प्रकार से गाये जायेंगे–
(4) नि होता सत्सि व (उपद्रव)।
(5) र्हिषि ओम् (निधन)।

इसी साम को जब तीन बार गाया जाता है तब उसे 'स्तोभ' कहते है। साम

गायन के लिये स्वर को कभी हृस्व और कभी विकृत या परिवर्तित करना पड़ता है, जैसे–पूर्व मन्त्र के अग्न का गायन में परिवर्तित रूप 'ओग्नाइ' हो जाता है। गायन में पूर्ति के लिये कभी–कभी निरर्थक पद भी जोड़ दिये जाते हैं, जैसे–औ, हौ, वा, हा आदि। इन्हें 'स्तोभ' कहते है।

छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार साम सप्तविध या सात प्रकार का होता है–(1) हिंकार, (2) प्रस्ताव, (3) आदि, (4) उद्‌गीथ, (5) प्रतिहार, (6) उपद्रव और (7) निधन। ऊपर निर्दिष्ट पच्चविध साम के ही अवान्तर भेद करने से इन सप्तविध सामों की उत्पत्ति होती है। उदाहरण के लिये साम के प्रथम मन्त्र के ऊपर तीन साम विहित हैं, जिनमें से प्रथम साम नीचे दिया जाता है। अन्य दो साम गानग्रन्थ में देखे जा सकते हैं –

गान –

(1) गीतमस्य पर्कम् –

ओग्नाई। आया हीऽ3। वोइ तो याऽ2इ। तोयाऽ2इ। गृणानो ह। व्यदा तो या ऽ23इ। तो याऽ2इ। नाइ होता साऽ23। त्साऽ2इ। बाऽ2 3 4 औ हो वा। होऽ2 3 4 वी।।1।।

4.5 सामगान पद्धति

इन्हीं सामयोनि मन्त्रों का आश्रय लेकर ऋषियों ने गान मन्त्रों की रचना की है। गान चार प्रकार के होते हैं–(1) (ग्राम) गेय गान (जिसे 'प्रकृतिगान' तथा 'वेय गान' भी कहते है); (2) आरण्यक–गान, (3) ऊहगान और (4) ऊह्य (या रहस्य–गान)। इन गानों में वेय–गान पूर्वार्चिक के प्रथम पाँच अध्याय के मन्त्रों के ऊपर होता है। अरण्य गान आरण्यक पर्व में निर्दिष्ट मन्त्रों पर ऊह और ऊह्य उत्तरार्चिक में उल्लिखित मन्त्रों पर मुख्यतया होता है। भिन्न–भिन्न शाखाओं में इन गानों की संख्या भिन्न–भिन्न है सबसे अधिक गान जैमिनीय शाखा में उपलब्ध होते हैं। यथा–

	कौथुमीय गान	जैमिनीय गान
गेयगान	1197	1232
अरण्यगान	294	291
ऊहगान	1026	1802
ऊह्यगान	205	356
कुल योग	2722	3681

भारतीय संगीतशास्त्र मूल इन्हीं साम–गायनों पर अवलम्बित हैं भारतीय संगीत जितना सूक्ष्म, बारीक तथा वैज्ञानिक है वह संगीत के समझदारों से अपरिचित नहीं है, परन्तु विद्वज्जनों की अवहेलना के कारण उसकी इतनी बड़ी दुरव्यवस्था आजकल उपस्थित है कि उसके मौलिक सिद्धान्तों को समझना एक बड़ी विषम समस्या है। साम–गायन की पद्धति के रहस्य का ज्ञान उसी प्रकार दुरुह है। एक तो यों ही साम के जानने वाले कम है जिस पर सामगानों को ठीक स्वरों में गाने वालों की संख्या तो उँगलियों पर गिनने लायक है, परन्तु फिर भी जानने वालों का नितान्त अभाव नहीं हैं यदि गायक के गले में लोच हो और वह उचित मूर्छना, आरोह और अवरोह का विचार कर सामगायन करे, तो विचित्र आनन्द आता है। वह साम मन्त्रार्थ न जानने पर भी हृदय को बरबस खींच लेता है। इसके लिए सामवेदीय शिक्षाओं की शिक्षा परमावश्यक है।

नारद शिक्षा के अनुसार साम के स्वरमण्डल इतने हैं–7स्वर, 3 ग्राम, 21 मूर्छना तथा 49 तान। इन सात स्वरों की तुलना वेणु–स्वर से इस प्रकार है–

साम	वेणु
1. प्रथम	मध्यम । भ
2. द्वितीय	गान्धार। ग
3. तृतीय	ऋषभ। रे
4. चतुर्थ	षड्ज। सा
5. पच्चम	निषाद। नि
6. षष्ठ	धैवत। ध
7. सप्तम	पच्चम। प

सामगानों में ये ही 7 तक के अंक तत्व् स्वरों के स्वरूप को सूचित करने के लिए लिखे जाते हैं। साम–योनि मन्त्रों के ऊपर दिये गये अंकों की व्यवस्था दूसरे प्रकार की होती है। सामयोनि मन्त्रों के सामगानों के रूप में ढालने पर अनेक संगीतानुकूल शाब्दिक परिवर्तन किये जाते है। इन्हें 'सामविकार' कहते हैं, जो संख्या में 6 प्रकार होते है–

(1) विकार = शब्द का परिवर्तन। 'अग्ने' के स्थान पर ओग्नायि।
(2) विश्लेषण = एक पद का पृथक्करण, यथा 'वीतये' के स्थान पर 'वोयितीया 2 यि'।
(3) विकर्षण = एक स्वर का दीर्घ काल तक विभिन्न उच्चारण; ये = या 23 यि।
(4) अभ्यास = किसी पद का बार–बार उच्चारण, यथा 'तोयायि' का दो बार उच्चारण।
(5) विराम = सुभीते के लिए किसी पद के बीच में ठहर जाना, यथा 'गुणनिक हब्दायतये' में 'ह' पर विराम लेना।
(6) स्तोभ = औ, होवा, हाउआ आदि गानाकुकूल पद।
ये विकार भाषाशास्त्र की दृष्टि से भी नितान्त माननीय हैं।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1 (अ) ऋक मन्त्रों के ऊपर गाये जाने वाले गान को कहते है।
(क) साम (ख) यजुः
(ग) ऋक (घ) अथर्व

(ब) साम का आधार होता है।
(क) ऋकमन्त्र (ख) यर्जुमन्त्रः
(ग) येदोनों (घ) कोई नहीं

(स) आर्चिक का शाब्दिक अर्थ हैं–
(क) साम समुह (ख) अथव समुह
(ग) ऋक् समुह (घ) ऋग्वेद समुह

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–
(क) षष्ठ प्रपाठक को..की संज्ञा दी जाती है।
(ख) वेदव्यास ने साम की शिक्षा...को दी थी।
(ग) छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार साम के...प्रकार है।

3. निचेकुछ वाक्यों दिये गये है। सही वाक्यों के सामने सही (√) तथा गलत वाक्यों के सामने गलत (×) का निशान लगायें।
(क) साम शब्द का अर्थ कई अर्थो में किया जाता है। ( )
(ख) जैमिनि के पुत्र का नाम सुमन्तु था। ( )
(ग) हिरण्यनाभ कोशल देश के राजपुत्र थे। ( )

(घ) साम गान की रचना सामयोनिमन्त्रों का आश्रय लेकर किया है। ( )

4.6 सारांश

उद्गाता नामक ऋत्विज के लिए संकलित ऋक् मन्त्र को समूह अर्थात् साम के वृहद् स्वरूप का ग्रहण ही सामवेद है। इस इकाई के माध्यम से आप सामवेद का अर्थ उनके रूप तथा साम वेद की शाखाओं के साथ–साथ उसमें वर्णित विषयों से परिचित हो सकेंगे सामवेद की प्रमुख शाखाऐं कितनी थी आज कितने प्राप्त है तथा जितने प्राप्त है उनमें एक दूसरे से कितना तथा किन कारणों से पृथक है।

अब प्रश्न यह उठता है कि साम जोकि ऋक–गान के लिए प्रयुक्त होता है। परन्तु उसके गान का स्वरूप क्या है? इस इकाई के माध्यम से आप साम के मुख्य विषयों के साथ साम–गान की विधि पर प्रकाश डाला गया है।

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1 (अ) (क) (ब) (क), (स) (ग)
2 (क) आरण्य पर्व
(ख) जैमिनि
(ग) सात
3 (क) (ख) (ग) (घ)

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

आचार्य बलदेव उपाध्याय–वैदिक साहित्य और संस्कृति श्री पाद सातवाहेकर सामवेद

4.9 अन्य उपयोगी पुस्तकें

संस्कृत साहित्य का इतिहास–उमाशंकर शर्मा 'ऋषि'
संस्कृत वाड्मय का वृहद् इतिहास (वेदकाण्ड) – पद्मश्री आचार्य बलदेव उपाध्याय

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

- सामवेद का स्पष्ट करते हुए इसके स्वरूप का निर्धारण किजीए।
- सामवेद के वर्ण्य–विषय पर प्रकाश डालिए।
- सामगान का सविस्तार वर्णन कीजिए।

******